वर्ष 25, अंक 6 Sr. 433, मुंबई, जुन 2026, पन्ने 24 कीमत रु. 5/-

।। श्रीमद् प्रेम-रामचन्द्र-भद्रंकर-महोदय-पुण्यपाल-वज्रसेन-हेमभूषणसूरिभ्यो नमः ।।

बीसवीं सदी के महान् योगी पू. पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य एवं
उन्हीं के कृपापात्र चरम शिष्यरत्न जैन हिन्दी साहित्य दिवाकर पू. आचार्यदेव
श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा. के चिंतनों को प्रसारित करने वाला मुखपत्र

अर्हद् दिव्य-संदेश

पाली में प्रवेश दि. 10 मई 2026

संयम संवेदना दि. 18 मई 2026

उपस्थित जनमेदिनी

अक्षत वधामणा

संपादक एवं प्रकाशक :-
सुरेन्द्र जैन, C/o. दिव्य संदेश प्रकाशन
Office No. 304, 3rd Floor, बे व्यु बिल्डींग,
विंग-ईस्ट बे, डॉ. एम.बी. वेलकर स्ट्रीट,
कालबादेवी, मुंबई-400 002.
M. 84 84 84 84 51
Correspondance Whatsapp only,
Website : divyasandesh.store

|| श्री महावीर स्वामिने नमः ||

||श्रीमद् प्रेम-रामचन्द्र-भद्रंकर-महोदय-पुण्यपाल-वज्रसेन-हेमभूषणसूरिभ्यो नमः ||

"सूरि प्रेम" की जन्मभूमि

में मरुधर रत्न पूज्य आचार्य श्री रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा. के संयम सुवर्ण वर्ष चातुर्मास का अनमोल अवसर

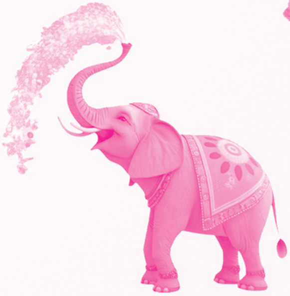

शुभ-दिन : असाढ सुदी छठ, वि.सं. 2082, दि. 19-7-2026, रविवार

(महावीर-प्रभु का च्यवन कल्याणक दिन)

-: आज्ञा प्रदाता :-

परम शासन प्रभावक पू. आचार्य देव श्रीमद् विजय मुक्तिप्रभसूरीश्वरजी म.सा.

प्रवचन प्रभावक पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय कीर्तियशसूरीश्वरजी म.सा.

-: चातुर्मास हेतु निश्रा दाता :-

'सूरिराम' के तेजस्वी शिष्यरत्न अध्यात्मयोगी, नमस्कार महामंत्र के बेजोड साधक-चिंतक एवं अनुप्रेक्षक पूज्यपाद पंन्यास प्रवर **श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** के कृपापात्र चरम शिष्यरत्न गोडवाड के गौरव, मरुधर रत्न, सरस्वती नंदन, पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय

रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा. आदि-5 ठाणा

एवं बहनों की आराधना हेतु पू.सा. श्री धर्मज्ञाश्रीजी आदि-2 ठाणा

इस पावन प्रसंग पर पधारने के लिए सभी **गुरुभक्तों** को **भावभरा आमंत्रण** है ।

-: मंगल कार्यक्रम :-

प्रातः 8.30 बजे स्वागत यात्रा (सामैया) का मंगल प्रारंभ फिर धर्मसभा पू. आचार्य भगवंत द्वारा हिन्दी भाषा में आलेखित 276 वीं पुस्तक 'चिंतन की चांदनी' का भव्य विमोचन !

- बाहर से पधारनेवाले महेमानों के आवास-निवास एवं तीनों टाइम भोजन की समुचित व्यवस्था रहेगी ।

संपर्क सूत्र :

प्रवीणभाई M. 6377055883,

मनीषभाई M. 9352793937,

सहदेव M. 9867204942

अहमदाबाद-दिल्ली W. Rly. Line में पिंडवाडा स्टे. है ।
स्टेशन से पिंडवाडा नगर एक कि.मी. दूरी पर है ।)

-: निमंत्रक :- शेठ कल्याणजी सोभागचंदजी जैन पेढी-पिंडवाडा-307022

रत्न संदेश

लेखक :-

प्रवचन प्रभावक पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय
रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

531 सच्ची बहादुरी

प्रतिकार करने में जो शक्ति चाहिए,
उससे भी अधिक शक्ति
सहन करने में चाहिए ।
किसी का सामना करना
कोई बहादुरी नहीं है ।
परंतु किसी के अपकार को
भी सहन कर लेना
उसी में सच्ची बहादुरी है ।

532 क्षमा

मुर्दे को जला देना बहुत जरुरी है ।
उसे ज्यादा देर तक पड़ा रखने से
बदबू फैलती है और रोग का
फैलाव होता है ।
बस, क्रोध पैदा होते ही उसे
'क्षमा' के जल से शांत कर देना चाहिए ।
अन्यथा वह क्रोध वैर की बदबू
और भवभ्रमण के रोग को पैदा
किए बिना नहीं रहेगा ।

जनवरी 2026 से दिसंबर 2026 तक दिव्यसंदेश मासिक के वार्षिक सहयोगी

मुख्य-सहयोगी

- **एक सद्गृहस्थ**-कांदिवली-बाली

सहयोगी

- **मातुश्री शांतिबेन पुखराजजी उमाजी करमाजी भंदर**-शांतिकमल-मुंबई
- **स्व. बदामीबाई चम्पालालजी राठोड़ (हस्ते राकेशभाई)** बाली, ईरोड़
- **मुनि स्थूलभद्रविजयजी** की प्रेरणा से **अ.सौ.मंजुला हसमुखलालजी महेता** मुंडारा-बोरीवली
- **ओटीबाई वालचंदजी, चाहत विनीतजी बोकरिया** विक्रोली (वे), खिमेल (राज.)

पूज्यश्री से पत्र सम्पर्क : प.पू. आचार्य श्रीमद् विजय **रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.**
C/o. सुरेन्द्र जैन, Office No. 304, 3rd Floor, बे.व्यु. बिल्डींग, विंग-ईस्ट बे, डॉ. एम.बी. वेलकर स्ट्रीट,
कालबादेवी, मुंबई-400 002. Cell 84 84 84 84 51 (only whatsapp)
विहार में संपर्क सूत्र : सहदेव 98672 04942

ऐसे थे गुरुदेव हमारे

बीसवीं सदी के महान योगी, नमस्कार महामंत्र के अजोड साधक,
निःस्पृह शिरोमणि, प्रशांतमूर्ति पूज्यपाद पंन्यास प्रवर

श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य

संपादक : जैन हिन्दी साहित्य दिवाकर पूज्य आचार्यदेव

श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी महाराज

4

वाचनाओं के कतिपय अंश

—वाचना दाता : पू.आ. श्री कलापूर्णसूरीश्वरजी म.सा.

ध्यान विचार :

❖ ऐसा कोई काल नहीं हैं जब तीर्थंकर नहीं होते । तीर्थंकर हो वहां चतुर्विध संघ रूप तीर्थ होता हैं । तीर्थ हो वहां तीर्थंकर की शक्ति सक्रिय होती हैं ।

मोक्ष की इच्छा उत्पन्न करनेवाले भगवान हैं । जन्म से ही स्वयं को बकरी समझने वाले सिंह के सिंहत्व को याद करानेवाला सिंह हैं । मोहराजारूपी चरवाह हमेशा रखवाली करता हैं : यह जीव कहीं स्वयं के सिंहत्व (प्रभुता) को पहचान न ले ।

❖ अजैन कुंडली-भेद कहते हैं, उसे हम ग्रंथिभेद कहते हैं । 3।। चक्करवाली कुंडली याने 3।। कर्म समझें ।

❖ 42 वर्ष पहले (सं. 2014) सबसे पहले पू.पं. भद्रंकर वि.म. की मुलाकात हुई । उन्होंने मुझे योगबिंदु वगैरह ग्रंथों को पढने की सलाह दी थी ।

उसके बाद साथ में रहना हुआ । 2031 में **पू.पं.श्री भद्रंकरविजयजी म.** राता महावीर तीर्थ में मिले । सर्वप्रथम 15 दिन तक उन्होंने मुझे सुना । मुझे खाली किया । फिर साधना का अमृत परोसा । ध्यान-विचार पर लिखने की प्रेरणा उन्होंने ही दी थी । उनकी निश्रा में ही लिखने की शुरुआत की । उस समय **'परस्परोपग्रह जीवानाम्'** के ऊपर क्यों नहीं लिखते ? ऐसा उपालंभ भी सुनने को मिला ।

मंत्र से मन वश में आता हैं । मंत्र वही हैं जिसका मनन करने से आपका रक्षण करे । मन शुद्ध होते ही आत्मा शुद्ध होती हैं ।

❖ मेरा प्रकाशित हुआ साहित्य मेरा नहीं हैं, **पू.पं. भद्रंकर वि.म.** का हैं । मेरा तो प्रकाशन करने का मन ही नहीं था, पर उन्होंने ही प्रकाशित करवा दिया, ऐसा कहूं तो चले ।

हृदय से बोलते हो या तैयार करके बोलते हो, वह तुरंत पता चल जाता हैं । बहुत ऐसे वक्ता देखे हैं : 15 मिनिट होते ही रुक जाते हैं । अंदर की टेप पूरी हो गई न ?

पू. पंन्यासजी महा. पूछते : व्याख्यान के बाद ऐसा होता हैं कि ऐसे बोले होते तो अच्छा होता ?

`नहींजी । ऐसा कुछ नहीं होता ।'

`कोई पूर्व तैयारी करते हो ?'

`भगवान को समर्पित बनकर बोलता हूं ।'

❖ यह अनाहत, कला, बिंदु, वगैरह भी माईलस्टोन हैं । मंजिल मिल जाने पर तो मात्र दो ही रहते हैं : आत्मा और परमात्मा । सचमुच, तो दो भी नहीं रहते, आत्मा और परमात्मा एक ही हो जाते हैं ।

जीव सरोवर अर्थात् समतामय आत्मा !

❖ पू. पंन्यासजी म. का उपयोग इतना सूक्ष्म था कि 10 मिनिट में एक हजार लोगस्स गिन सकते थे । एक श्वासमें 108 नवकार गिन सकते थे । अक्षर कोई रह न जाय, उपयोग अत्यंत तीक्ष्ण रूप से चलता ।

❖ भगवान मोक्ष के कर्ता नहीं हैं तो भगवान के पास मोक्ष की याचना क्यों ? भगवान भले मोक्ष के कर्ता न हो, परंतु मोक्ष के पुष्ट निमित्त जरुर हैं ।

पू. देवचंद्रजी पुष्ट कारण को ही कर्ता के रूप में मानकर स्तवन करते हैं । ऐसा उन्होंने ही कहा हैं ।

हम इसे मात्र उपचार से मानते हैं, यही तकलीफ हैं । उपचार नहीं, यही वास्तविकता हैं ।

प्रभु को संसार का सृष्टि-कर्ता भले हम न मानें, पर हमारे मोक्षकर्ता तो हैं ही । हम भी पहले यह औपचारिक रूप से ही मानते थे । पर के संसर्ग से ही इस औपचारिकता की मान्यता पूर्ण रूप से नष्ट हुई ।

❖ ललित विस्तरा में भगवान को **`स्वतुल्यपदवीप्रद:'** कहा हैं ।

भगवान मोक्ष के दाता औपचारिक होते तो ऐसा विशेषण नहीं होता । इससे भी आगे बढकर नमुत्थुणं की **स्वतुल्यपदवीप्रद** संपदा में भगवान को `जिणाणं जावयाणं' इत्यादि विशेषणों से स्तुति की हैं, वह इसी बात का सूचक हैं : भगवान मात्र जीतनेवाले नहीं, जीतानेवाले भी हैं ।

बुद्ध ही नहीं, बोधक भी हैं ।

मुक्त ही नहीं, मोचक भी हैं ।

सच्चा ध्यान वह कहा जाता हैं, जिसमें उचित क्रिया को धक्का न पहुंचे । प्रत्येक उचित क्रिया परिपूर्ण रूप से जहां होती हो वह सच्चा ध्यानयोग हैं । ध्यानयोग कभी कर्तव्यभ्रष्ट नहीं बनाता । अगर ऐसा होता हो तो समझें : यह ध्यान नहीं, ध्यानाभास हैं । पू.पं. भद्रंकरविजयजी के पास यही सीखने को मिला था ।

`उचियपडिवत्तीए सिया' - मैं उचितकार्य करनेवाला बनूं । - यों पंचसूत्र में प्रार्थना की गई हैं ।

ध्यान में जाना सरल हैं, पर जीवों के साथ मित्रता निभानी उनकी सेवा करनी, उचित कर्तव्य करना, बहुत कठिन हैं । यह बात पू.पं. भद्रंकरविजयजी महाराजने बहुत ही घूंट-घूंटकर समझाई थी ।

ध्यान विचार :

❖ ध्यान विचार पूर्वाचार्यों की संक्षिप्त नोट हैं, किंतु हमारे लिए अमूल्य पुंजी हैं । वि.सं. 2030 से मैं इस ग्रंथ का परिशीलन कर रहा हूं । साधना भी कर रहा हूं । इस पर से मैं कहता हूं : यह अद्भुत ग्रंथ हैं ।

❖ पू.पं. भद्रंकर वि.म. की संमतिपूर्वक ही इस ग्रंथ का निर्माण तथा उसमें शुद्धि-वृद्धि हुई हैं । उनकी संमति के बिना एक कदम भी मैं आगे नहीं बढा ।

हमारा पूरा जीवन परलक्षी हो जाने के कारण ऐसा अद्भुत ग्रंथ सामने होने पर भी उसकी उपेक्षा हो रही हैं, ऐसा मुझे लगता हैं । रुचि प्रकट करने के लिए ही मेरा यह प्रयास हैं ।

तत्त्वचिंतक को कभी राग-द्वेष नहीं होते, व्याधि में असमाधि नहीं होती । अंतिम समय में उन्हें भयंकर पीड़ा हुई थी, पर चेहरे पर वेदना का कोई चिह्न नहीं । पू.पं. भद्रंकरविजयजी म. को अंतिम समय में भयंकर पीड़ा थी, पर तत्त्वचिंतक थे न ? इसलिए ही व्याधि में समाधि रख सके । बीमारी में उन्होंने पिंडवाड़ा से आधोई चातुर्मास में (वि.सं. 2033) पत्र लिखा था । उस पत्र में उन्होंने लिखा था : **पीड़ा अपार है, किंतु मन 'उपयोगो लक्षणम्' के चिंतन में रहता हैं ।**

अनुप्रेक्षा (स्वाध्याय का 4 था प्रकार) द्वारा चिंतन-शक्ति प्रकट होती हैं । हर पदार्थ की अनुप्रेक्षा करो तो ही वह भावित बनता हैं । स्वाध्याय के अंतिम दो प्रकार (अनुप्रेक्षा और धर्मकथा) उपयोग के बिना कभी हो नहीं सकते । **वाचना आदि तीन में उपयोग न हो वह फिर भी बन सकता हैं, लेकिन उपयोग के बिना अनुप्रेक्षा या धर्मकथा हो ही नहीं सकते ।**

चंडकौशिक जैसे को भी भगवान तारने आते हों तो हमें तारने नहीं आयेंगे ?

भगवान हम को सदा तारने की इच्छा रखते ही हैं, किंतु कठिनाई यही हैं : हम ही तैरना नहीं चाहते हैं । हम ही नि:शंक बनकर भगवान को नहीं पकड़ रहे हैं ।

प्रत्युत, हम हमारे तारनेवाले को हमारी ओर खींचने का प्रयत्न कर रहे हैं । अग्नि में या कुएं में पड़ा हुआ आदमी स्वयं को खींचनेवाले को मदद तो न करे, पर प्रत्युत स्वयं के बचानेवाले को खींचने का प्रयत्न करता हो तो क्या समझना ?

(पू. हेमचंद्रसागरसूरिजी पधारे ।)

मुनि भाग्येशविजयजी : समाप्त कराने आये ।

पूज्यश्री : समाप्त कराने नहीं, सार सुनने के लिए आये हैं । पू.पं. भद्रंकर वि.म. के पास ऐसा बहुत सीखने मिला हैं । किसी घटना में से वे अच्छा ही ग्रहण करते ।

टेढी-टेढी लकीरें करते बालक को उपालंभ देने की जगह एक (1) लिखकर बताओ तो काम हो जायेगा । वह सीख जायेगा । वह जितना करे उसकी अनुमोदना करो ।

(क्रमश:)

महावीर प्रभु की पट्टधर-परंपरा

-: लेखक :-
पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय
रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

लब्धि निधान श्री गौतमस्वामी

शंका-समाधान

गौतम स्वामी स्वयं चार ज्ञान के धनी थे । समस्त श्रुत के पारगामी थे । 50000 केवली शिष्यों के गुरु थे फिर भी वे प्रभु को कई प्रश्न पूछते रहते थे ।

वे महान ज्ञानी होने पर भी अपने ज्ञान की वृद्धि के लिए, पर्षदा में रहे बाल जीवों के प्रतिबोध के लिए, शिष्यगण में अपने वचन की प्रतीति हेतु तथा सूत्र रचना में प्रभु की मोहर लगाने हेतु प्रश्न पूछते रहते थे । एक मात्र भगवती सूत्र में गौतम स्वामी आदि द्वारा पूछे गए 36000 प्रश्नों के जवाब है ।

बाल-जीवों के बोध के लिए गौतमस्वामी द्वारा पूछे गए कुछ प्रश्न व प्रभु द्वारा प्रदत्त उत्तर यहां प्रस्तुत है ।

गौतम स्वामी : हे भगवान् ! किस कर्म के योग से जीव नरक में जाता है ?

महावीर प्रभु : हे गौतम ! जो जीव हिंसा करता है, झुठ बोलता है, चोरी करता है, परस्त्रीगमन करता है, अति पाप परिग्रह में आसक्त रहता है, जो पाँच अणुव्रतों की विराधना करता है तथा अतिक्रोधी, अतिमानी, कपटी, रौद्र स्वभावी, महापापी, चुगलखोर, अतिलोभी, साधुओं की निंदा करने वाला, अधर्मी, असंबद्ध वचन बोलने वाला, दुष्ट बुद्धि वाला और कृतघ्न होता है, वह जीव अत्यन्त दु:ख और शोक से भरी हुई नरक गति प्राप्त करता है ।

गौतम स्वामी : हे करूणा निधान प्रभु ! किन कर्मोदय से जीव अल्प संसारी होता है ?

महावीर प्रभु : हे गौतम ! जगत में धर्म है, अधर्म है, सर्वज्ञ परमात्मा तथा ऋषि-मुनि भी हैं, इस प्रकार जो जीव दृढ़ श्रद्धा रखता है वह जीव अल्प संसारी होता है और वह जीव अल्पकाल में सब कर्मों का क्षय कर मोक्ष प्राप्त करता है ।

गौतम स्वामी : **हे करुणा सिन्धु ! किस कारण जीव संसार समुद्र को पार कर मोक्ष नगरी में पहुंचता है ?**

महावीर प्रभु : हे गौतम ! जो पुरुष निर्मल ज्ञान, दर्शन और चारित्र गुणों से युक्त होता है, वह संसार समुद्र को पार कर अल्प काल में ही मोक्ष में चला जाता है।

गौतम स्वामी : **हे प्रभु ! जीव स्वर्गलोक में किस कारण से जाता है ?**

महावीर प्रभु : हे गौतम ! जो जीव तप, संयम, चारित्र और दान में रूचि रखता हो, जो भद्रिक एवं सरल परिणामी हो, दयावंत हो, तथा गुरूवचन में श्रद्धा रखता हो। ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र का आराधक हो, वह जीव देवलोक में उत्पन्न होता है।

गौतम स्वामी : **हे जगत्बंधु ! कौन से कर्म से मनुष्य रोगी होता है ?**

महावीर प्रभु : हे गौतम ! जो पुरुष विश्वास दिलाकर विश्वासघात करके जीव को मारता है, मन से शुद्ध आलोचना नहीं करता, वह मर कर दूसरे जन्म में रोगी होता है।

गौतम स्वामी : **हे कृपानिधान ! जीव धैर्यवान किस कारण से होता है ?**

महावीर प्रभु : हे गौतम ! जो जीव किसी भी जीव को त्रास नहीं देता और दूसरों की पीड़ा मिटाता है, साथ ही परोपकार व सेवा करता है, वही अपने अगले भव को सुधार कर धैर्यवान साहसिक होता है।

गौतम स्वामी : **हे कृपासिन्धु ! कौनसा उदित कर्म जीव को डरपोक बनाता है ?**

महावीर प्रभु : हे गौतम ! जिसने कुत्तों, तोतों, चकवा आदि के बच्चों तथा सूअर, हिरण आदि जीव को पींजरे में बंद कर रखा हो। जीवों को दु:खी किया हो वही दूसरे भव में डरपोक होता है।

गौतम स्वामी : **हे दयासागर ! जीव तिर्यंच गति में किस कर्म से उत्पन्न होता है ?**

महावीर प्रभु : हे गौतम ! जो मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए मित्र बनता है तथा अपना कार्य सिद्ध होने पर मित्र को छोड़ देता है। मित्र को कठिनाइयों में डालता है और मित्र के विरुद्ध बोलता है, जो निर्दयी होता है, मायावी होता है, वह जीव मरकर तिर्यंच गति में पशु रूप में उत्पन्न होता है।

गौतम स्वामी : **हे दयालु ! जीव किस कारण से प्राप्त वस्तु का उपभोग करता है ?**

महावीर प्रभु : हे गौतम ! जो मनुष्य ह्रदय से हर्षपूर्वक साधु महात्मा को आवश्यक वस्तु, आहार-पानी देता है, वह प्राप्त वस्तु का उपभोग करता है।

गौतम स्वामी : **हे कृपासागर ! किस कर्म के उदय से जीव सौभागी होता है ?**

महावीर प्रभु : हे गौतम ! जो पुरुष देव, गुरु एवं साधु संतों का विनय करता है, कभी कटु वचन नहीं बोलता, वही सौभाग्यशाली होता है, एवं सर्व लोगों में प्रिय होता है।

गौतम स्वामी : **हे करुणासागर ! किस कर्मोपार्जन के कारण मनुष्य की सीखी हुई विद्या निष्फल हो जाती है ?**

महावीर प्रभु : हे गौतम ! जो कपटयुक्त विनय द्वारा गुरु के पास से विद्या अथवा ज्ञान ग्रहण करता है और फिर गुरु की अवज्ञा करता है, गुरु के नाम को छिपाता है। उसकी विद्या निष्फल जाती है।

गौतम स्वामी : हे दया समुद्र ! किस शुभ कर्म के उदय से जीव सीखी हुई विद्या द्वारा सफलता प्राप्त करता है ?

महावीर प्रभु : हे गौतम ! जिसने गुरु का बहुमान किया है, गुरु का विनय किया है, गुणवान का गुणगान किया है, उसकी ग्रहण की हुई विद्या सफल होती है।

गौतम स्वामी : हे कृपावतार ! किस कर्म के उदय से जीव रूपवान होता है ?

महावीर प्रभु : हे गौतम ! जो छत्र के दंड के समान सरल स्वभावी हो, जिसका मन धर्म कार्य में लगा रहता हो, साथ ही वह जीव देव, गुरु एवं संघ की भक्ति करता हो, वह जीव मर कर दूसरे भव में सुन्दर रूपवाला होता है।

गौतम स्वामी : हे कृपासिंधु ! जीव किस कर्म के फल से दुर्भागी होता है ?

महावीर प्रभु : हे गौतम ! जो गुण रहित होने पर भी गुणवान होने का अहंकार करे। जो गुणवान धैर्यवान, तपस्वियों की निन्दा करता है। जो विषयी होता है, जाति आदि का अभिमान करता है, दूसरे जीवों को दुःख पहुँचाता है, वह जीव दुर्भागी होता है और उसे देखकर लोग घृणा करते हैं।

गौतम स्वामी : हे जगवत्सल प्रभु ! किन कर्मों से जीव नीरोगी होता है ?

महावीर प्रभु : हे इन्द्रभूति गौतम ! जो जीव विश्वास रखने वाले जीव की रक्षा करता है और अपने सब पाप स्थानकों की आलोचना करता है, गुरु द्वारा दिये गये प्रायश्चित्त को पूरा करता है, वह जीव मरणोपरान्त अगले भव में नीरोगी रहता है।

गौतम स्वामी : हे जगतारण प्रभु ! जीव किन कर्मों के उदित होने से हीन अंग को प्राप्त करता है ?

महावीर प्रभु : हे गौतम ! जो पुरुष कपट द्वारा, हाथ की सफाई द्वारा, गलत तोल द्वारा एवं कुंकुम, कपूर, मजिष्ठ आदि पदार्थों में मिलावट कर बेचने और माया कपट करने से, वह पुरुष भवान्तर में मनुष्य होने पर भी हीन अंगवाला बनता है।

गौतम स्वामी : हे दीनदयाल ! किन कर्मों के प्रकट होने से जीव को लक्ष्मी मिलती है व स्थिर रहती है ?

महावीर प्रभु : हे गौतम ! जो वस्तु अपने स्वयं को अति प्रिय हो, रुचिकर हो वह वस्तु शुद्ध भाव से यदि साधु पुरुषों अर्थात् सुपात्रों को दी जावे तथा पश्चात्ताप न करे और उल्लास प्रसन्नता के साथ अनुमोदना करे, उसकी लक्ष्मी शालिभद्र की लक्ष्मी के समान स्थिर रहती है।

(क्रमशः)

प्रेरक कहानियाँ

लेखक :
प.पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

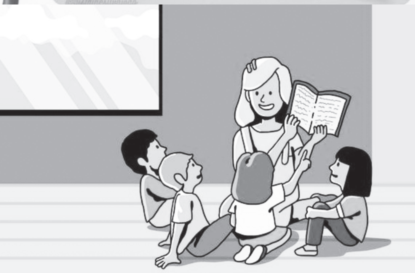

198. दृष्टि अनुसार लाभ हानि

करीम अत्यंत परेशान था, उसको नींद नहीं आ रही थी, उसे पूछा–क्या बात है ? उसने कहा–बहुत नुकसान हो गया है, करीब 4-5 लाख का ।

पुनः उसकी पत्नी को पूछा–मामला क्या है ? उसने कहा-मेरी समझ में नहीं आता कैसा नुकसान हुआ है, सौदे में उनको 10 लाख की आशा थी और 5 लाख ही कमा पाये, इसलिए वे 5 लाख का नुकसान बता रहे है । उसकी दृष्टि में कमाये हुए 5 लाख नहीं है, इसलिए उसे हानि लग रही है और वह दुःखी हो रहा है ।

साधना में बाधक है:–

1) बाह्य जगत में सुख की आशा, 2) भौतिक देह में जीवन की आशा ।

199. अनुभव के ऊपर आशा की विजय

एक व्यक्ति की तीसरी पत्नी भी मर गई, उसनें चौथी बार शादी की, काफी बुढ़ा हो गया था, गांव के लोग उसे भेंट करते-करते भी थक गये । अंत में गांव के लोगों ने परेशान होकर एक भेंट की जिस पर लिखा था, **'अनुभव के ऊपर आशा की विजय !'** जब तक उसके पत्नी थी, तब वह उससे ऊब कर रोता था और अब पत्नी के मरने पर, मरने के लिए रोता है, फिर भी नई आशा में अनुभव को भूल जाता है ।

200. सबसे गरीब कौन ?

एक संन्यासी को कुछ धन मिला, वह अपना धन सबसे गरीब व्यक्ति को देना चाहता था ! उसने अपने शिष्यों से बात की, अंत में गांव में से अनेक लोग इकट्ठे हो गये ।

संन्यासी ने अपनी शर्त सुनाई ! सभी लोग अपने आपको सबसे गरीब कहने लगी, परन्तु सन्यासी सबको टालता ही गया, अंत में हाथी पर आरूढ़ सम्राट् उस राह से निकला और सन्यासी ने वह धन की झोली, राजा के ऊपर फेंक दी ।

सम्राट् ने हंसकर कहा-पागल है, जो सबसे अमीर व्यक्ति को दे रहा है ? घोषणा की गरीब की ओर दे रहा है, अमीर को ! संन्यासी ने कहा–**'जिनके पास कम धन है, उनकी आकांक्षाएँ भी सीमित है, परन्तु तुम्हारे पास धन संपत्ति ज्यादा हो, अतः तुम्हारी आकांक्षाएँ भी अत्यधिक है !'** यही तुम्हारी गुलामी है, और यही तुम्हारी सबसे अधिक गरीबी है ।

201. तुम्हारा भी बंधन है

देश का राजनेता, जंगल से जा रहा था । डाकुओं ने उसकी कार रोकी ! नेता तो बहुत घबराया । डातुओं ने कहा घबराओं नहीं, हम सजातीय है ! हमारी और तुम्हारी कई बातों में समानता हैं, नेता ने कहा– मैं समझा नहीं ! डाकुओं ने कहा-हम प्रत्यक्ष लूंट करते हैं, आप परोक्ष लूंट करते है, हमारे पीछे पुलिस चलती है, आपके आगे पुलिस चलती हैं । हम पुलिस से पीछे से बंधे हुए है, तुम आगे से ! यह तुम्हारा भी तो बंधन है ।

202. जीवन और तृष्णा

एक काल्पनिक कथानक है–एक सम्राट् 100 वर्ष का हो गया, मौत उसे लेने आई ।

मौत ने कहा, **'आप तैयार हो जाय !'**

सम्राट् ने कहा, **'अभी तो कुछ भोग न पाया हूँ, सभी आशाएं मन में ही है !'**

मौत ने कहा मुझे तो किसी को ले जाना ही है, तुम्हारा बेटा यदि अपना जीवन तुम्हें दे दे तो मैं तुम्हे छोड़ सकता हूँ ! सम्राट् के बीस बेटे थे, सभी को बुलाया परन्तु कोई उम्र देने को तैयार नहीं हुआ ।

अंत में 12 वर्ष के छोटे बेटे ने कहा–**'मेरी उम्र ले लो !'** मौत ने उसे कहा, **'पागल तो नहीं हुआ है ?'** उसने कहा, **'मेरा बाप 100 वर्ष में जो न कर सका, व मैं क्या कर संकूगा, यदि पिता की उम्र दुगुनी हो जायेगी तो शायद वे कुछ तो कर पाने का आनंद ले सकेंगे । मौत उसे उठा ले गई ।'**

फिर 100 वर्ष बाद मौत उस सम्राट् को लेने आई ! सम्राट् ने कहा–अभी तो आशाएँ अधुरी है, सपनें अधुरे रह गये है ।

सम्राट् ने पुन: अपने पौत्रों को बुलाया और आखिर सबसे छोटा पौत्र तैयार हो गया और मौत उसे उठा ले गई ।

इस प्रकार उस सम्राट् के हजार वर्ष बीत गये, परन्तु फिर भी वह मौत के लिए तैयार नहीं रहा ।

आखिर मौत ने कहा, **'अब बस करो !'** मैं अभी थक गई हूँ और तुम अभी तक अपने अनुभव से भी नहीं सीख पा रहे है ।

203. दूसरे की मौत में अपनी मौत दिखती है ?

गौतम राजकुमार ने कहा, 'ये लोग रो क्यों रहे है और किसको ले जा रहे हैं ?' सारथी ने कहा–यह आदमी मर गया है, उसको जलाने के लिए श्मशान पर ले जा रहे है ?

गौतम ने कहा, 'तो क्या सभी लोग मरते है और मुझे भी मरना पडेगा ?

सारथी ने कहा, सभी लोग मरते ही है फिर भी मैं किस मुंह से कहूँ कि आप भी मरोगे यह कहना तो अशुभ है फिर भी सत्य को छुपा नहीं सकता है ।'

गौतम सब समझ गये अब रथ लौटा दे, क्योंकि अब मैं मर ही गया हूँ । 40-50 वर्ष का फासला अब कोई बड़ा नहीं है, यह आज मरा है, मैं कल मरुंगा । तो अब मुझे नहीं चाहिये जीवन के रंग राग, अब तो मैं ऐसा जीवन जीऊंगा कि जिससे में मौत को भी मार सकूंगा और गौतम संन्यासी बन गये ।

204. दया ने प्राण बचायें

अमेरिका के राष्ट्रपति आइजन हावर द्वितीय महायुद्ध के समय सेनापति थे । जर्मन के जासुस सक्रिय थे । उन्होंने आइजन हावर को शुट करने की योजना बना दी थी । आइजन हावर अपनी योजनानुसार पेरिस आ रहे थे, मार्ग में एक दु:खी दर्दी कराह रहा था, वे उसे हॉस्पिटल ले चले और अपनी गाडी रवाना कर दी, गाडी आतें ही जासुसों ने बम गिराया, परन्तु आइजन हावर बच गये थे ।

205. अंतरंग पीडा को कौन जाने ?

1) हेमिंग्वे का नाम लोक प्रसिद्ध Famous है, उसने Noble Prize प्राप्त किया था, दुनियाँ का सुप्रसिद्ध लेखक था, बाहर से उसके जीवन में बडी सफलताएँ थी, परन्तु अन्त में उसने आत्म हत्या की थी, कौन जाने उसको अंदर मैं कैसी पीड़ा होगी ? जब व्यक्ति अपनी एक-एक पल को सहन करने में असमर्थ हो जाता है, तब आत्म हत्या कर बैठता है ।

2) एक चोर एक ही दुकान में एक ही रात्रि में 7 बार घूसा, आखिर वह पकडा गया । मेजिस्ट्रेट ने पूछा, 'मामला क्या हैं ! मुकदमे तो हमने बहुत देखे, पर एक ही दुकान में एक ही रात में सात बार चोरी ? सामान ढोने के लिए साथ क्यों नहीं चूना ?' चोरने कहा–बडा मुश्किल मामला है, लोग इतने बेईमान है कि किसी को साथी बनाना कठिन हो गया है । दुकान थी कपड़ें की, जो भी चुरा कर पत्नी के पास ले गया, उसने ना पसंद कर दिया ।

206. दान ही मालकियत है

वस्तुत: दान से ही वस्तु के स्वामित्व का ज्ञान होता है । जो व्यक्ति दान देता है, वह यह बता रहा है कि वस्तु मेरे से नीची है, मुझ से ऊपर नहीं ! मैं उसे किसी को दे सकता हूं, देना मेरे हाथ में है । जो व्यक्ति देकर प्रसन्न होता है, उसी की मूर्च्छा टूटती है, जो व्यक्ति देने में समर्थ नहीं है तो समझना कि वह वस्तु का मालिक नहीं वस्तु का गुलाम है ।

207. एक ही अपराध-सजा भिन्न-भिन्न

अकबर के तीन व्यक्तियों ने एक ही अपराध किया था, एक को बुलाकर अकबर ने कहा-'मैंने तुमसे ऐसी आशा नहीं रखीं थी और उसे छोड़ दिया । दूसरे को साल भर की सजा की और तीसरे को नग्नकर सो कोडें लगवाये और जेल में डाला ।

प्रश्न करने पर अकबर ने कहा, तीनों की योग्यता भिन्न थी, पहला कुलीन और आंख की शर्मवाला आदमी था, उसको तो इतना कहते ही उसने आत्महत्या कर दी । दूसरा थोडा मध्यम बुद्धिवाला था और तीसरें को तो तुम ही जाकर पूछ लो !

पूछने पर कहा-कोडें के निशान तो मिट जायेंगे, 15 साल की ही तो जेल है, फिर तो मजा है, मैंने तो इतना डाका डाला है कि मेरी तीन पीढ़ी खाए तो भी नहीं खुटे ! (अपराधी की वृत्ति भिन्न-भिन्न होने के कारण सजा भी भिन्न-भिन्न होती है ।)

(क्रमश:)

पश्चात्ताप की भाव यात्रा

संवेदना :–
सरस्वती नंदन, पू.आचार्य देव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

कय पावो वि मणुसो, आलोइअ निंदिअ गुरुसगासे ।
होइ अइरेग लहुओ, ओहरिअ भरुव्व भारवहो ।।

सीता कलंकित बनी :- जिस सीता के लिए रामचन्द्रजी ने रावण के साथ भयंकर युद्ध खेला, उस युद्ध में हजारों–लाखों लोग मारे गए । युद्ध में विजय प्राप्त कर रामचन्द्रजी अयोध्या आए । अयोध्या आने के बाद महासती सीताजी गर्भवती बनी । गर्भकाल पूरा होने आया और उसी समय सीता का पाप उदय में आया । इस पापोदय के कारण महासती सीता भी कलंकित बनी । रामचंद्रजी ने जिस सीता के लिए भयंकर युद्ध खेला था, आज वे उसी सीता को भयंकर जंगल में छुड़ाने के लिए तैयार हो गए ।

गर्भवती महासती सीता के जीवन में भयंकर आपत्ति आ पड़ी । इसका कारण था कि उन्होंने अपने पूर्व भव में निर्दोष ऐसे साधु महात्मा पर दुराचार का कलंक लगाया था ।

महासती सीताजी पूर्व भव में पुरोहित की पुत्री वेगवती थी । एक बार उस नगर में किसी त्यागी-तपस्वी संयमी महात्मा का आगमन हुआ । लोगों में चारों ओर तपस्वी महात्मा के तप की सुगंध फैल गई । लोगों में तपस्वी महात्मा के प्रति आदर-बहुमान बढ़ गया । सभी लोग अति उत्साह के साथ उन महात्मा के तप, त्याग की अनुमोदना करने लगे ।

महात्मा की इस उज्ज्वल कीर्ति को सुनकर वेगवती के दिल में ईर्ष्या की भावना आ गई ।

वेगवती ने महात्मा पर झूठा आरोप लगाते हुए नगर में चारों ओर यह गलत बात फैला दी कि ये महात्मा तो ढोंगी हैं । बाहर से ये तपस्वी होने का दिखावा कर रहे हैं, जबकि ये तो दुराचारी हैं । किसी स्त्री के साथ कुकर्म करते हुए मैंने देखा है ।'' बस, नगर में चारों ओर यह बात फैल गई । जो लोग उन महात्मा का आदर सत्कार करते थे, वे ही लोग महात्मा के विरोधी बन गए । वे महात्मा को धिक्कारने लगे । चारों ओर महात्मा की अपकीर्ति होने लगी ।

झूठे आरोप के कारण निर्दोष ऐसे महात्मा बदनाम हो गए । उसी समय उन महात्मा ने अभिग्रह धारण कर लिया, **'जब तक मेरा कलंक दूर नहीं होगा, तब तक मैं कायोत्सर्ग में ही खड़ा रहूंगा ।'** बस, महात्मा के उस अभिग्रह से उस क्षेत्र के अधिष्ठायक जागृत हो गए ।

अधिष्ठायक देव ने वेगवती का मुँह काला कर दिया। जब वेगवती अपने घर गई तब उसने दर्पण में अपना मुँह देखा तो वह एकदम घबरा गई, अरे ! यह क्या ?

ऐसा क्यों हो गया ? तत्क्षण वह सावधान हो गई। वह सोचने लगी, ``निर्दोष महात्मा पर मैंने जो कलंक लगाया है, उसी का यह परिणाम होना चाहिए।''

वह महात्मा के पास चली गई और अपने अपराध की क्षमा याचना करने लगी। नगरजनों को भी इकट्ठा करके उसने अपनी भूल को स्वीकार करते हुए कहा, यह मेरी भूल है। ईर्ष्यावश होकर मैंने निर्दोष महात्मा पर झूठा आरोप लगाया है। बस, महात्मा पर आया कलंक दूर हो गया। वे महात्मा पुनः निर्दोष सिद्ध हुए। लोगों में पुनः उनकी प्रतिष्ठा बढ गई।

वेगवती के भव में निर्दोष महात्मा पर जो आरोप लगाया था, उसी पापोदय के कारण महासती सीता पर कलंक आया और उन्हें अपनी गर्भवती स्थिति में ही भयंकर जंगल में जाना पड़ा।

झूठ आरोप के पाप ने उनके जीवन में भयंकर आपत्ति ला दी।

महासती ऋषिदत्ता पर कलंक आया :- ``राइमइ रिसिदत्ता'' कहकर जिस ऋषिदत्ता को याद किया जाता है, वह ऋषिदत्ता ऋषिपुत्री पवित्र सन्नारी थी। राजकुमार कनकरथ का संबंध कावेरी की राजपुत्री रुक्मिणी के साथ निश्चित हुआ था। रुक्मिणी के साथ पाणिग्रहण करने के लिए कनकरथ ने अपने नगर से प्रयाण किया था, परंतु बीच मार्ग में ऋषिदत्ता नाम की ऋषि पुत्री के साथ उसका लग्न हो गया।

इस घटना को जानकर रुक्मिणी को खूब आघात लगा। वह किसी भी उपाय से कनकरथ के साथ पाणिग्रहण करना चाहती थी। अपनी इस कामना की पूर्ति में वह ऋषिदत्ता को कंटकरूप समझती थी, अतः वह किसी भी उपाय से ऋषिदत्ता को खत्म करना चाहती थी। उसने एक जोगिनी को साधकर ऋषिदत्ता पर मानव-मांसाहार-भक्षिणी होने का आरोप लगा दिया।

इस भयंकर आरोप के फलस्वरूप निर्दोष ऐसी ऋषिदत्ता को भी राजा ने नगरत्याग की सजा कर दी, निर्दोष व महासती ऋषिदत्ता को जंगल में छुड़वा दिया गया।

यद्यपि ऋषिदत्ता निर्दोष थी, फिर भी उस पर एक भयंकर आरोप आया, इसका एक मात्र कारण था कि उसने अपने पूर्व भव में ऐसा ही पाप किया था।

वह पूर्व भव में गंगासेना नाम की साध्वी थी। प्रवर्तिनी साध्वी जब निःसंगा नाम की साध्वीजी के तप त्याग की प्रशंसा को सहन न कर पाई, तब उसने निर्दोष साध्वीजी पर झूठा आरोप लगाते हुए कहा- यह तपस्विनी कैसे ? दिन में उपवास का तप करती है और रात्रि में राक्षसी की तरह मांसाहार करती है।'' बस, इस पाप की आलोचना किए बिना ही उसकी मृत्यु हो गई और वह साध्वी मरकर ऋषिदत्ता बनी।

पूर्वभव में किए गये पाप के उदय के कारण इस जीवन में संपूर्ण निर्दोष होने पर भी उस पर यह भयंकर आरोप आया और वह बदनाम हुई।

सामान्यतया आलोचना प्रायश्चित्त द्वारा आत्मा अन्य पापों की सजा से तो मुक्त हो जाती है, परंतु किसी पर लगाए गए आरोप की सजा जीवात्मा को अवश्य भुगतनी पड़ती है ।

कई लोगों की जबान पर कोई लगाम नहीं होती है, मन में जो भी आया बोल देते हैं । कुछ भी जानकारी न हो तो भी किसी के लिए कुछ भी अभिप्रायः दे देते हैं, अतः कुछ भी कहना हो तो बहुत सोच-विचार करके कहना चाहिए । झूठे आरोप की सजा बड़ी भयंकर होती है ।

रत्नाकर-पच्चीसी के रचयिता सरल हृदयी आ.श्री रत्नाकरसूरिजी

विक्रम संवत् की 14 वीं सदी का समय था ।

उस काल में **जैनाचार्य श्री रत्नाकरसूरिजी म.** की ख्याति दिग्-दिगन्त तक फैली हुई थी । उनकी वाणी में अद्भुत आकर्षण था । एक बार भी जो श्रोता उनकी वाणी-सरिता में अपने आपको डुबो देता, वह जीवन पर्यंत भूल नहीं पाता । दान, शील, तप, भाव, क्षमा, वैराग्य, दया, परोपकार आदि किसी भी विषय पर जब उनकी वाणी का अजस्त्र स्त्रोत फूट निकलता तब सैकड़ों की संख्या में श्रोतागण उस प्रवाह में बहने लगते । शास्त्रपाठों की साक्षी व दृष्टांत के माध्यम से वे शुष्क विषय को भी अत्यंत रसमय बना देते थे । उनके प्रवचनों को सुनने के लिए चारों ओर से भक्तों की भीड़ उमड पडती । वे जहाँ भी जाते अपनी मीठी-मधुरी वाणी के प्रभाव से जिनवाणी के शाश्वत-सत्यों का प्रचार करते जाते थे । वे बोलते थे तब श्रोताओं को ऐसा ही प्रतीत होता मानों उनकी जिह्वा पर सरस्वती साक्षात् नृत्य कर रही है ।

एक दिन की बात है । धंधुका के सुधन नाम के श्रावक ने उनकी कीर्ति सुनी...वह व्यापार के लिहाज से उस नगर में आया हुआ था अतः व्यापार के कार्यभार से निवृत्त होकर वह एक दिन ठीक समय पर प्रवचन सुनने के लिए उपाश्रय में पहुँच गया ।

बस, एक ही प्रवचन-श्रवण का उसके मन पर ऐसा जादुई प्रभाव पडा कि उसके जीवन में व्यापार गौण हो गया और आत्म-साधना मुख्य बन गई । वह नियमित रूप से प्रवचन-श्रवण करने लगा । उसका मन आचार्य भगवंत के चरणों में समर्पित हो गया । वह अधिकांश समय उपाश्रय में ही बिताने लगा । जीवन-निर्वाह के लिए आवश्यक व्यापार कर शेष समय सामायिक-स्वाध्याय आदि की साधना में ही बिताने लगा ।

एक दिन सुधन किसी प्रयोजनवश बाहर गया हुआ था...वह अचानक ही दोपहर के समय में उपाश्रय में आ खडा हुआ..उस समय आचार्य भगवंत प्रतिलेखना की क्रिया कर रहे थे । आचार्य भगवंत अपनी क्रिया में व्यस्त थे अतः उन्हें सुधन के आगमन का पता नहीं चला, उस समय सुधन ने देखा आचार्य भगवंत अपने पास में रही पोटली में से रत्न गिन रहे थे । रत्नों को गिनकर उन्होंने वह पोटली वापस अपने स्थान पर रख दी ।

सुधन ने यह सारा दृश्य अपनी आँखों से देखा और उसके आश्चर्य का पार न रहा । **'अरे !**

कंचन और कामिनी के परम त्यागी और सदैव त्याग धर्म का उपदेश देनेवाले ही कंचन की माया में इतने मुग्ध बन गए ? अहो ! कथनी और करणी में इतना अंतर ?'

अहो ! मेरे गुरुदेव श्रावकों को अनेक बार परिग्रह की अनर्थता समझाते हैं तो क्या उन्हें रत्नों में परिग्रहता के दर्शन नहीं हो पा रहे है ?

सुधन के मन में गुरुदेव के प्रति अपूर्व भक्ति भाव था, अतः उसने सोचा, **'किसी भी उपाय से मुझे गुरुदेव को समझाना होगा ।'** परन्तु गुरुदेव के सामने एक भी शब्द बोलने की उसकी हिम्मत नहीं थी । वह मन ही मन उपाय सोचने लगा ।

इतना सब कुछ होने पर भी गुरुदेव के प्रति रहे औचित्य व्यवहार में कुछ भी कभी आने नहीं दी । वह पूर्ववत् ही गुरुदेव के प्रति आदर और सम्मान भाव रखता था ।

दिन पर दिन बीतने लगे...और एक दिन उसके मन में एक विचार बिजली की भाँति कोंध उठा । उसने सोचा, **'परिग्रह के अनर्थों को समझाने वाला ऐसा कोई श्लोक लेकर गुरुदेव के पास जाऊँ और उसका अर्थ उन्हें पूछूँ...संभव है परिग्रह की अनर्थता बतलाते-बतलाते कोई अर्थ उनकी अंतरात्मा को छू जाय और वे भी सदा के लिए परिग्रह के पाप में से सर्वथा मुक्त हो जायें ।'** इस प्रकार विचार कर वह पूर्वाचार्य कृत धर्मग्रंथों में से परिग्रह को अनर्थ बतलाने वाला श्लोक ढूंढने लगा-इस प्रकार करते अचानक उसके हाथ में **'धर्मदास गणि'** कृत **'उपदेश माला'** का एक श्लोक आ गया । वह उस ग्रंथ के उस श्लोक को लेकर एकांत में गुरुदेव के पास पहुँच गया ।

अचानक सुधन के आगमन को जानकर आचार्य भगवंत ने उसे पूछा, **'महानुभाव ! अचानक कैसे आना हुआ ?'**

सुधन ने कहा, **'भगवंत ! एक श्लोक का अर्थ समझ में नहीं आ रहा है, कृपया समझाने की कोशिश करें ।'**

आचार्य भगवंत ने वह ग्रंथ हाथ में लिया और उसको पढ़ने लगे । वह श्लोक इस प्रकार था ।

'दोस-सयमूल-जालं, पूव्वरिसि विवज्जियं जइ धनं ।
अत्थं वहसि अणत्थ कीस...अणत्थं तवं चरसि ?'

श्लोक को पढते ही आचार्य भगवंत बोले, **'अहो ! इसमें क्या है ? यह श्लोक धन रखनेवाले मुनि को उद्देशित करके कहा है ।'** इसका तात्पर्य हैं, **'धन एक-दो नहीं सैकड़ों दोषों को खींचकर लानेवाला जाल है, इसी कारण पूर्व ऋषियों ने इस धन का त्याग किया है ।'** उस अनर्थकारी धन को हे मुनि ! यदि तू पास में रखता है तो फिर व्यर्थ में तप क्यों करता है ?

आचार्य भगवंत के इस अर्थ को सुनकर सुधन ने कहा, **'भगवंत ! आपने जो अर्थ किया वह बराबर होगा, परन्तु मेरे दिमाग में वह अर्थ बैठता नहीं हैं ।'**

आचार्य भगवंत ने कहा, **'अच्छा ! कल आना, कल मैं अच्छी तरह से समझाऊंगा ।'**

दूसरे दिन आचार्य भगवंत ने शास्त्रों की अनेक पंक्तियों व दृष्टांतों के आधार पर परिग्रह की अनर्थता समझाने की कोशिश की...परन्तु सुधन का एक ही जवाब था, **'भगवंत ! परिग्रह की अनर्थता का जवाब मेरे अन्तर्मन को नहीं छू पा रहा है ।'**

भगवंत ! आप जो कुछ भी समझाते है, वे बातें मेरे कान को छू जाती हैं, परन्तु पता नहीं क्यों यह बात मेरे ह्रदय को नहीं छू पा रही है । आचार्य भगवंत ने पुनः कल आने को कहा । इस प्रकार प्रतिदिन आचार्य भगवंत अपनी वाणी-प्रतिभा के द्वारा परिग्रह की अनर्थता समझाने लगे । इस प्रकार छह महीने बीत गए...परन्तु सुधन के गले वह बात नहीं उतर पाई ।

एक दिन की बात है । अपने नित्यक्रमानुसार आचार्य भगवंत अपने वस्त्रादि की प्रतिलेखना के बाद उन रत्नों की पोटली की सार-संभाल ले रहे थे । उस समय भी उनके दिमाग में वो ही प्रश्न घूम रहा था । वे सोच रहे थे मैं इस सुधन को कैसे समझाऊं ?...और अचानक एक विचार उनके दिलो दिमाग में खड़ा हो गया । वे रत्नों को देख सोचने लगे, **'अहो ! मैं परिग्रह की अनर्थता का उपदेश दे रहा हूँ...और मैं स्वयं ही तो परिग्रह के जाल से लिपटा हुआ हूँ' बस सुधन को समझाने का उन्हें उपाय मिल गया । तत्काल वे बड़ा पत्थर लेकर उन रत्नों को चूर-चूर करने लगे और उसे बाहर फेंकने लगे ।'**

आचार्य भगवंत रत्नों के महीन टुकड़ों को बाहर फेंक ही रहे थे, तभी सुधन ने उपाश्रय में प्रवेश किया । वह अपनी मनोकामना को पूर्ण होते देख मनोमन खुश हो गया और बोला, 'भगवंत ! आप क्या कर रहे हो ?' **'इन रत्नों को बाहर फेंक रहा हूँ ।' 'प्रभो ! ये तो मूल्यवान रत्न हैं न ?'**

'सुधन ! इनसे भी अधिक मूल्यवान रत्न (रत्नत्रयी) तो मुझे गुरुदेव ने दिए हैं...परन्तु आज तक मैं उनकी सही कीमत नहीं समझ पाया ।' आज मुझे उन रत्नों की सही पहिचान हो पाई है और इस कारण उन तुच्छ रत्नों को बाहर फेंक रहा हूँ । आचार्य भगवंत ने कहा, **'आज तक मैं तुझे परिग्रह के अनर्थ को नहीं समझा सका, उसका कारण ख्याल में आ गया हैं ।'**

'भगवंत ! अब तो मुझे भी परिग्रह की अनर्थता समझ में आ गई है ।'

आचार्य भगवंत सोचने लगे, **'अहो ! आज तक मेरी विद्वत्ता सिर्फ बाह्य-प्रदर्शन की ही वस्तु थी । सचमुच आज मुझे आत्म भान हुआ है ।**

उसके बाद वे विहार कर शत्रुंजय गिरिराज की पावनभूमि पर पहुँचे और वहां शत्रुंजय आदिनाथ दादा की वि.सं. 1371 माघ शुक्ला की प्रतिष्ठा के पावन प्रसंग पर **'श्रेयश्रियां मङ्गल केलिसद्म'** की 25 स्तुतियों के माध्यम से उन्होंने अपने पापों का पश्चात्ताप किया । संस्कृत की ये स्तुतियां खूब भाववाही है । बोटाद निवासी कवि शामजीभाई हेमचंद देसाई ने इन स्तुतियों का गुजराती भावानुवाद भी किया है, जो खूब प्रचलित है । वि.सं. 1384 में पू. आचार्य भगवंत का समाधिपूर्वक कालधर्म हुआ था ।

(क्रमशः)

शांत सुधारस

जीवन में शांति का उपाय

विवेचनकार : **प.पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.**

यह जीवात्मा इस अनादि भवसागर में अनन्त-अनन्त रुपों को धारण कर अनन्त-अनन्त पुद्गलपरावर्त तक भटकता रहता है ।

भवभ्रमण करते अनन्तकाल बीत चुका है

किसी आत्मा ने सर्वज्ञ परमात्मा से पूछा-``**प्रभो ! इस संसार में मैं कब से भ्रमण कर रहा हूँ ?**''

प्रभु ने कहा-``**अनादिकाल से ।**''

``**तो प्रभो ! आज तक मेरे कितने भव हुए ?**''

प्रभु ने कहा-``**अनन्तानन्त ।**''

सर्वज्ञ सर्वदर्शी भी जीवात्मा के संसार-परिभ्रमण की आदि नहीं बता सकते हैं ।

अपनी आत्मा का अनन्तकाल निगोद में व्यतीत हुआ है । निगोद से बाहर निकलने के बाद भी अपनी आत्मा के जितने भव हुए हैं, उन सबका कथन सर्वज्ञ परमात्मा भी नहीं कर सकते हैं । कल्पना करें, किसी सर्वज्ञ भगवन्त के हजार मुख हों, उनका हजार वर्ष का आयुष्य हो और प्रति सैकण्ड अपना एक भव बतलावें और वे जीवन पर्यन्त कहते रहें तो भी वे हमारे भवों का वर्णन नहीं कर सकते हैं । हजार मुख वाले हजारों केवली भी हमारे समस्त भवों का वाणी से कथन करने में असमर्थ हैं । इस प्रकार इस संसार में प्रत्येक जीवात्मा ने अनन्तानन्त भव किये हैं ।

एक पुद्गलपरावर्तकाल अर्थात् अनन्तकालचक्र । जब जीवात्मा चौदह राजलोक में रहे समस्त पुद्गलों को (आहारक वर्गणा के पुद्गलों को छोड़कर) औदारिक आदि वर्गणा के द्वारा भोग लेता है तब एक पुद्गलपरावर्तकाल होता है । इसमें अनन्त चौबीसियाँ बीत जाती हैं । ऐसे अनन्त पुद्गलपरावर्तकाल से आत्मा इस संसार में भ्रमण करती आ रही है और इस अनन्तकाल में चौदह राजलोक में एक भी ऐसा आकाशप्रदेश नहीं बचा है, जहाँ अपनी आत्मा ने जन्म और मृत्यु के द्वारा स्पर्श नहीं किया हो ।

इस अनन्तकाल में अपनी आत्मा ने अनन्त रुपों को धारण किया है । कोई ऐसा जन्म नहीं, कोई ऐसा क्षेत्र नहीं, कोई ऐसी जाति नहीं, कोई ऐसा देश नहीं, कोई ऐसी योनि नहीं जहाँ अपनी आत्मा ने जन्म नहीं लिया हो ।

ओह ! अफसोस है कि अनन्तकाल से अपनी आत्मा संसार-सागर के भँवर में फँसी हुई है, फिर भी उससे मुक्त बनने के लिए लेश भी प्रयत्न नहीं करती है ।

जन्म-मरण आदि के भय से भयभीत बने हे प्राणी ! तू इस संसार की अतिभयंकरता को समझ ले, मोह रुपी शत्रु ने तुझे गले से बराबर पकड़ लिया है और वह हर कदम पर तुझे आपत्ति में डाल रहा है ।

मोह की विडम्बना से भरा संसार

संसार-भावना के अन्तर्गत संसार के वास्तविक स्वरुप का दर्शन कराया गया है । इस संसार का बाह्य दिखावा-आडम्बर तो बहुत चित्ताकर्षक है, किन्तु भीतर से यह अति भयंकर है । यह संसार भी उन्हीं को अच्छा लगता है, जो मोह के नशे में हैं । वे शत्रु स्वरुप मोह को भी मित्र समझ बैठे हैं ।

- सुना है कि एक किसान के पशु हरी घास को खाने के इतने आदी हो गए थे कि यदि कोई उन्हें सूखा घास डालता तो वे उस ओर मुँह भी नहीं करते ।

एक बार उस नगर में भयंकर दुष्काल पड़ा । उस किसान के पास हरे घास की तंगी आ गई । अपने पशुओं को बचाने के लिए उसने कुछ सूखा घास खरीद लिया और पशुओं को डाला । किन्तु किसी ने उसमें अपना मुँह नहीं डाला । मालिक को आश्चर्य हुआ-यह क्या बात है ? कोई घास नहीं खा रहा है । अन्त में किसी मित्र ने सलाह दी कि ये हरी घास को खाने के आदी हो गए हैं, अतः ये सूखी घास की ओर नजर भी नहीं कर रहे हैं । अतः इनकी आँखों पर हरे रंग के कांच बँधवा दो, फिर देखो इसका कमाल । किसान ने वैसा ही किया और तत्काल वे पशु उस सूखी घास पर टूट पड़े ।

बस ! यही हालत है इस संसार में संसारी जीवात्मा की है । मोह के नशे के कारण उसे इस संसार की भयानकता समझ में ही नहीं आती है ।

सम्पूर्ण विश्व के समस्त प्राणियों पर मोहराजा एकछत्र राज्य करना चाहता है । एकमात्र धर्मराजा तीर्थंकर परमात्मा की शरण में गए प्राणियों पर ही उसका कोई अधिकार नहीं चलता है । शेष प्राणियों को तो वह नाना प्रकार से परेशान करता रहता है । उसने जीवात्मा को गले से ही पकड़ लिया है और वह जीवात्मा को जन्म-जरा-मरण-रोग-शोक आदि नाना प्रकार की पीड़ाएँ देता रहता है ।

जीवात्मा को जन्म की पीड़ा पसन्द नहीं है । जीवात्मा को मृत्यु का दुःख नापसन्द है ।

जीवात्मा को वृद्धावस्था की वेदनाएँ प्रिय नहीं हैं । वह सुख चाहता है और दुःख से मुक्त बनना चाहता है । परन्तु वह संसार से मुक्त बनना नहीं चाहता है ।

पूज्य उपाध्यायजी म. हमें सम्यग्बोध देते हुए कहते हैं कि सर्वप्रथम इस संसार की भयंकरता को समझ लो । यह संसार नाना प्रकार की यातनाओं का घर है । वास्तविक सुख तो मुक्ति में ही है । अतः इस मोह के नशे का त्याग कर दो ।

हे मूढ़ ! स्वजन तथा पुत्र आदि की परिचय रुपी डोरी से तू व्यर्थ ही अपने आपको बाँध रहा है । तू कदम-कदम पर नये-नये अनुभवों के द्वारा अनेक प्रकार के पराभवों से घिरा हुआ है ।

स्वजन का प्रेम झूठा है

स्वजन अर्थात् आत्मीयजन । सच्चा स्वजन तो वह है जो अपनी आत्मा का हित करे, बाकी तो सब परजन ही हैं । परन्तु मोह के नशे में आत्मा स्वजन-परजन की इस सच्ची व्याख्या को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हो पाती है, वह तो देह के सम्बन्धियों को ही स्वजन स्वीकारने के लिए तैयार

है । आत्मा का निरन्तर हित चाहने व करने वाले देव-गुरु और धर्म को वह सच्चा स्वजन मानने के लिए तैयार ही नहीं है । इसी कारण दुनिया में हम देखते हैं कि स्वसन्तान व स्वकुटुम्ब के लिए लाखों रुपये खर्च करने वाले भी देव-गुरु और धर्म के लिए एक रुपया भी प्रेम से खर्च करने के लिए तैयार नहीं हो पाते हैं । धर्म में खर्च आते ही वे अपना मुँह मोड़ लेते हैं । ऐसा क्यों ? इसका कारण यही है कि धर्म के प्रति उनके हृदय में आत्मीय सम्बन्ध नहीं हो पाया है । स्वजन-पुत्र-परिवार के मोह में व्यक्ति इतना अन्धा हो जाता है कि वह भावी का विचार ही भूल जाता है । कवि ने ठीक ही कहा है–

पूत कपूत तो क्यों धन-संचय ?
पूत सपूत तो क्यों धन संचय ?

सन्तान यदि कपूत है तो उसके लिए धन का संचय करना मूर्खता ही है । वह तो पिता के धन को भी विनाश के मार्ग में नष्ट कर देगा और सन्तान यदि सपूत है तो उसके लिए भी धन का संचय करने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि सपूत सन्तान ही तो सच्चा धन है । पुत्र यदि सपूत है तो वह अपनी सज्जनता के बल से अपना गुजारा आसानी से चला सकेगा और वह अपने पिता की भी सेवा अदा करेगा । परन्तु मोह से मूढ़ बनी आत्मा की तो बात ही कुछ और है । जीवन-यापन के लिए पर्याप्त धन होते हुए भी वह **'हाय' 'हाय'** करता रहेगा और अन्याय-अनीति से किसी भी तरह धन के संग्रह का प्रयास जारी रखेगा । स्वजन, पुत्र, परिवार की तीव्र आसक्ति के परिणामस्वरुप जीवात्मा को क्या मिलता है ? एकमात्र तिरस्कार व अपमान के कटु अनुभव ही ।

श्रेणिक महाराजा के हृदय में अपनी बाल सन्तान कोणिक के प्रति कितना अधिक प्रेम था ! लेकिन उसे बदले में क्या मिला ? एकमात्र भयंकर कारावास की सजा ही न !

समरादित्य-चरित्र में पिता सिंह महाराजा और पुत्र आनन्दकुमार की बात आती है । आनन्द के जन्म के बाद उसकी माँ उसे मार डालना चाहती थी, परन्तु सिंह महाराजा ने उसे बचा दिया था । तत्पश्चात् पिता ने पुत्र को प्रेम दिया.....स्नेह दिया और अन्त में राज्य देने के लिए तैयार हो गया । परन्तु पुत्र ने बदले में क्या दिया ? अति भयंकर कारावास की सजा और अन्त में मौत ही न !

इस संसार में समस्त रिश्ते-नाते स्वार्थ से भरे है । पुत्र भी पिता को तभी तक प्रेम करता है, जब तक उसकी शादी न हो जाय अथवा उसे पिता से धन पाने की आशा है । ज्योंही उसकी यह आशा टूट जाती है, त्योंही उसका प्रेम समाप्त हो जाता है ।

जब तक पिता युवा होते है, तब तक उसकी सन्तान भी उससे प्रेम करती है, उसकी आज्ञा मानती है, परन्तु ज्योंही पिता भयंकर रोगों से ग्रस्त हो जाते हैं अथवा वृद्धावस्था से कमजोर बन जाते हैं, तब वे ही पुत्र उस पर हुकूमत चलाते हैं और उस बूढ़े को पुत्र के इशारों पर चलना पड़ता है ।

राज्य की लिप्सा से औरंगजेब ने अपने पिता शाहजहाँ को कैद करवा दिया था ।

संसार के सम्बन्ध स्वार्थ से भरे हैं । अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए भाई, भाई की हत्या के लिए; पति, पत्नी की हत्या के लिए और पुत्र, पिता की हत्या के लिए भी तैयार होते देखे गए हैं ।

(क्रमशः)

शासन प्रभावना के समाचार

मरुधर रत्न, सरस्वती नंदन, जैन हिन्दी साहित्य दिवाकर, पूज्यपाद **आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.** आदि ठाणा-5 की शुभ निश्रा में पूज्यश्री के सर्वविरति सुवर्ण वर्ष निमित्त मारवाड के राजेक विद्या गांव-नगरों में संयम संवेदना के भव्य कार्यक्रम हो रहे है ।

बडगांव में पंचाह्निका महोत्सव के बाद दि. 4 मई 2026 को 12 कि.मी. विहार कर नेतरा विहार धाम में पधारे ।

दि. 5 मई को 12 कि.मी. विहार कर कमल विहार-सांडेराव पधारे ।

दि. 6 मई को 14 कि.मी. विहार कर श्री मुनिसुव्रत स्वामी जैन तीर्थ शनिधाम जोमपुरा पधारे ।

दि. 7 मई को 9 कि.मी. विहार कर श्री चन्द्रप्रभस्वामी जैन संघ-बालराई पधारे ।

दि. 8 मई को 9 किम.ीम विहार कर श्री संभवनाथ जैन तीर्थ-वल्लभ साधना केन्द्र पधारे ।

दि. 9 मई को 14 कि.मी. विहार कर श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथ जैन तीर्थ-सुशील वाटिका पधारे ।

पाली में शासन प्रभावना

दि. 10 मई को 12 कि.मी. विहार कर पाली पधारे । प्रातः 8.30 बजे श्री मुनिसुव्रत स्वामी जिनालय-नेहरु नगर से कोहीनूर म्युजिकल बेन्ड की रमझट के साथ पूज्यश्री का भव्य सामैया प्रारंभ हुआ । सामैया का लाभ शेठ नवलचंदजी सुप्रतचंद तपागच्छ जैन संघ की आज्ञा से संघवी श्री कालुरामजी धारीवाल परिवार ने लिया । गाजे-बाजे के साथ पूज्यश्री का महावीर नगर में प्रवेश हुआ । श्री वासुपूज्य स्वामी जैन मंदिर के प्रांगण में पूज्यश्री का प्रेरणादायी प्रवचन हुआ । 12 वर्ष के बाद पूज्यश्री का पाली नगर में प्रवेश निमित्त सकल संघ में अपूर्व उल्लास था ।

दि. 11 मई से प्रतिदिन प्रातः 9.30 बजे से पूज्यश्री के प्रेरणादायी प्रवचन हुए ।

गुणानुवाद सभा

दि. 13 मई को पिण्डवाडा रत्न, श्रमणशिल्पी सिद्धांत महोदधि पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रेमसूरीश्वरजी म.सा. की 58वीं स्वर्गारोहण पुण्यतिथि निमित्त श्री नवलखा आराधना भवन में प्रातः 9.00 बजे विशाल गुणानुवाद सभा का आयोजन हुआ । पूज्य आचार्य भगवंत एवं मुनि श्री स्थूलभद्रविजयजी म.सा. ने गुणानुवाद किये । भरतभाई एवं सुनीलभाई ने गुरुगुण स्तुति एवं गुरु भक्तिगीत प्रस्तुत किये । गुणानुवाद सभा में लगभग 350 लोगों की उपस्थिति रही । 40 रुपये की प्रभावना हुई । फिर 5 द्रव्य के सामुहिक एकासने हुए । लगभग 250 आराधकों ने एकासने किये ।

संयम संवेदना

दि. 18 मई को पूज्यश्री के संयम सुवर्ण वर्ष की अनुमोदनार्थ प्रातः 8.45 बजे मरुधर केशरी भवन में संयम संवेदना एवं गुरु वधामणा का भव्य कार्यक्रम हुआ । लाभार्थी परिवार मातुश्री शकुंतलादेवी उगमराजजी गुंगलिया परिवार एवं श्री नवलचंद सुप्रतचंद जैन संघ-पेढी के ट्रस्टी गणों ने

पूज्य आ. श्री रामचन्द्रसूरीश्वरजी एवं पूज्य पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी की तस्वीरों पर मालार्पण किया । फिर आहोर से पधारे दिनशेभाई शर्मा ने अनोखे अंदाज में पूज्यश्री के जीवन प्रसंगों का रोचक वर्णन किया । बीच-बीच में लालराई से पधारे किशनभाई ने भक्ति संगीत प्रस्तुत किया । अंत में पूज्यश्री का हितशिक्षा प्रवचन हुआ । लाभार्थी परिवार ने पूज्यश्री को अक्षत वधामणा किया । महावीरभाई बोकडिया, अध्यक्ष-गौतमजी मेहता एवं कमलेशभाई गुंगलिया ने पूज्यश्री के 43 एवं 37 वर्ष पूर्व हुए चातुर्मास की स्मृति कराकर कृतज्ञता व्यक्त की । 11.30 बजे तक चले कार्यक्रम में लगभग 400 लोगों की उपस्थिति रही । लाभार्थी परिवार की ओर से मैसुरपाक की प्रभावना की गई ।

दि. 19 मई को प्रात: 9.00 बजे प्रवचन में स्थानकवासी संप्रदाय के आचार्य विजयराजजी के शिष्य मुनिश्री विशालप्रियजी आदि भी पधारे । उन्होंने अपने प्रवचन में अपनी गृहस्थ अवस्था में इरोड में पूज्यश्री द्वारा प्राप्त ज्ञानाभ्यास के उपकारों के प्रति कृतज्ञता प्रस्तुत करते हुए प्रवचन दिया । फिर पूज्यश्री का प्रेरणादायी प्रवचन हुआ ।

दि. 23 मई को पंजाब देशोद्धारक, 73वें पट्टधर पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजयानंदसूरीश्वरजी म.सा. की 130वीं स्वर्गारोहण पुण्यतिथि निमित्त प्रात: 9.00 बजे गुणानुवाद सभा हुई । पूज्यश्री ने उनके जीवन चरित्र का मार्मिक वर्णन किया । लगभग 300 लोगों की उपस्थिति रही । सामुहिक रुप से बुन्दी की प्रभावना दी गई ।

दि. 26 मई को रमेशजी संकलेचा परिवार की हार्दिक विनती से उनके गृहांगण में पूज्यश्री का प्रवचन आयोजित हुआ । प्रात: 8.40 बजे गाजे-बाजे के साथ संकलेचा परिवार ने पूज्यश्री का स्वागत किया । फिर **क्रोध आबाद तो जीवन बर्बाद** विषय पर पूज्यश्री का 1½ घंटे तक धाराप्रवाही प्रवचन हुआ । लगभग 300 श्रोताओं की उपस्थिति रही । प्रवचन बाद 20 रुपये की प्रभावना हुई ।

दि. 27 मई को भारतीय जैन संघटना-पाली की हार्दिक विनती से ज्ञान गच्छीय जैन स्थानक-धनश्री साधना केन्द्र में प्रात: 9.00 बजे से प्रवचन का आयोजन हुआ । प्रारंभ में संघटन के सचित वसंतभाई सोनीमडिया ने पूज्यश्री का हार्दिक स्वागत किया एवं साधना केन्द्र के मंत्री अमरचंदजी बोहरा ने कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए चातुर्मास की विनती भी की । फिर 10.45 बजे तक जवाब पर लगाम विषय पर पूज्यश्री का मार्मिक प्रवचन हुआ । लगभग 350 श्रोताओं ने प्रवचन श्रवण का लाभ लिया । प्रवचन बाद 50 रुपये की प्रभावना हुई ।

दि. 28 मई को करुणा दिन (बकरी ईद) निमित्त प्रात: 9.00 बजे पूज्यश्री का प्रेरणादायी प्रवचन हुआ । करुणादिन निमित्त समस्त पाली जैन संघ में लगभग 500 आयंबिल हुए । आयंबिल का लाभ मूलचंदजी गुलाबचंदजी तलेसरा परिवार खारडा वाले ने लिया ।

श्रुतवंदना पुस्तक विमोचन

दि. 29 मई को प्रात: 8.45 बजे श्री मरुधर केशरी भवन में पुस्तक विमोचन निमित्त श्रुत वंदना का अनूठा कार्यक्रम हुआ । 37 वर्ष पूर्व पूज्यश्री की 13-14 वीं पुस्तक शांत सुधारस का विमोचन पाली में हुआ था । आज 37 वर्ष के बाद 274 वीं पुस्तक **''हालार गौरव-वज्रसेन सौरभ''** के विमोचन निमित्त पाली संघ में अपूर्व उत्साह था । अमदाबाद से पधारे संकेतभाई शाह ने भावपूर्वक संवेदना प्रस्तुत की । संगीतकार विपूलभाई ने मधुर संगीर प्रस्तुत किया । प्रकाश सहयोगी-कालुरामजी धारिवाल परिवारजनों ने ज्ञान दीपक प्रकाशित किया । श्री

नवलचंद सुप्रतचंदजी जैन पेढी के ट्रस्टीगणों ने गुरु भगवंत की तस्वीरों पर एवं सरस्वती देवी की प्रतिमा पर मालार्पण किया । भाववाही संवेदना के साथ बीच में बालमुनि श्रीं विमलपुण्यविजयजी ने पूज्यश्री की 274 पुस्तकों के कंठस्थ नामोच्चार कर सभा को मंत्रमुग्ध किया । इस प्रसंग पर पधारे दीक्षा दानवीर पूज्य आ.श्री गुणरत्नसूरीश्वरजी म.सा. के प्रशिष्य मुनि श्री पूर्वरत्नविजयजी ने मार्मिक प्रवचन दिया । फिर पूज्यश्री का प्रासंगिक प्रवचन हुआ ।

प्रवचन के बाद रमेशजी पारेख, ओमप्रकाशजी छाजेड, अमरचंदजी बोहरा, शांतिलालजी धारीवाल, विमलजी धारीवाल, सुशीलजी धारीवाल आदि ने पूज्यश्री द्वारा आलिखित 274 वीं पुस्तक "**हालार गौरव-वज्रसेन सौरभ**" का भव्य विमोचन किया । अंत में साहित्य प्रदर्शनी पर लाभार्थी-धारीवाल परिवार ने अक्षत वधामणा किये । कार्यक्रम में लगभग 400 लोगों की उपस्थिति रही । सभी को दहितरे के पेकेट की प्रभावना हई ।

श्री सीमंधरस्वामी भावयात्रा

दि. 1 जून को मातुश्री पवनबेन शांतिलालजी मेहता के आत्मश्रेयार्थ पांच दिवसीय प्रभु भक्ति महोत्सव का आयोजन हुआ । आज अंतिम दिन प्रात: 9.00 बजे श्री नवलखा पार्श्वनाथ आराधना भवन में श्री सीमंधर स्वामी-महाविदेह क्षेत्र भावयात्रा का आयोजन किया गया । पूज्यश्री ने अद्भूत शैली में पाली से महाविदेह क्षेत्र के बीच रहे शाश्वत चैत्य, वर्षधर पर्वत, युगलिक क्षेत्र आदि का मार्मिक वर्णन किया । संगीतकार विपुलभाई ने भाववाही संगीत प्रस्तुत किया । लगभग 500 लोगों की उपस्थिति रही । मेहता परिवार की ओर से 50 रुपये की प्रभावना एवं आमंत्रित मेहमानों की साधर्मिक भक्ति की गई ।

दि. 6 जून को प्रात: 6.00 बजे पूज्यश्री आदि ठाणा-5 श्री नवलचंद सुप्रतचंद जैन पेढी के मुख्य आराधना भवन-गुजराती कटला में पधारे । प्रात: 9.00 बजे माता-पिता एवं संतानों के कर्तव्य विषय पर जाहिर प्रवचन हुआ । सामुहिक रूप से 50 रुपये की प्रभावना हुई । लगभग 300 लोगों की उपस्थिति रही । दिन भर स्थिरता गुजराती कटला उपाश्रय में रही ।

समूह सामायिक

दि. 7 जून को प्रात: 8.00 बजे श्री नवलखा आराधना भवन में समुह सामायिक का आयोजन हुआ । सामायिक के वस्त्र में पधारे लगभग 500 लोगों ने समुह-रूप से सामायिक की आराधना की । पूज्यश्री ने अपने प्रेरक प्रवचन द्वारा सामायिक में विधि-अविधि का मार्मिक बोध दिया । प्रारंभ में 20 रुपये की प्रभावना एवं अंत में सभी की साधर्मिक भक्ति हुई, जिसका लाभ श्री मूलचंदजी मदनलालजी संकलेचा परिवार ने लिया ।

पाली नगर में 12 वर्षों बाद पूज्यश्री का आगमन हुआ एवं लगभग 1 महिने की स्थिरता रही । प्रतिदिन प्रेरणादायी प्रवचन एवं विविध कार्यक्रमों से चातुर्मास जैसा माहौल बना ।

आगामी कार्यक्रम

दि. 22 से 24 जून–मुण्डारा में ध्वजारोहण निमित्त त्रिदिवसीय महोत्सव ।

दि. 01 एवं 08 जुलाई–शिवगंज में नूतन जिनालय का खनन मुहूर्त एवं शिलान्यास ।

दि. 19 जुलाई–पिण्डवाडा में भव्य चातुर्मास प्रवेश ।

RNI No. MAHHIN/2000/00860 • Postal Reg. No. MCS/125/2024-26 • WPP License No. MR/TECH/WPP-285/South/2024-26
Posted at Patrika Channel STG Office Mumbai-1 • Date of Pub. 12 Day of every month • Posting Date 15th of every month

गुणानुवाद सभा दि. 23-5-2026

पगले दि. 26-5-2026

श्रुतवंदना दि. 29-5-2026

पुस्तक विमोचन

श्री सीमंधर-महाविदेह भावयात्रा दि. 1-6-2026

If undelivered please return to : DIVYA SANDESH PRAKASHAN
Office No.304, 3rd floor, Bay Vue Building, Wing--East Bay,
Dr.M.B.Velkar Street,Kalbadevi, Mumbai-400002.

To,

From :

Published and Printed by : SURENDRA JAIN on behalf of DIVYA SANDESH PRAKASHAN
Printed at : SOMANI PRINTING PRESS, Gala No. 3-4, Amin Ind. Estate, Sonawal Cross Road No. 2, Goregaon (E), Mumbai-400 063. and Published from : Office No.304, 3rd floor, Bay Vue Building, Wing--East Bay, Dr.M.B.Velkar Street,Kalbadevi, Mumbai-400002. EDITOR:SURENDRA JAIN